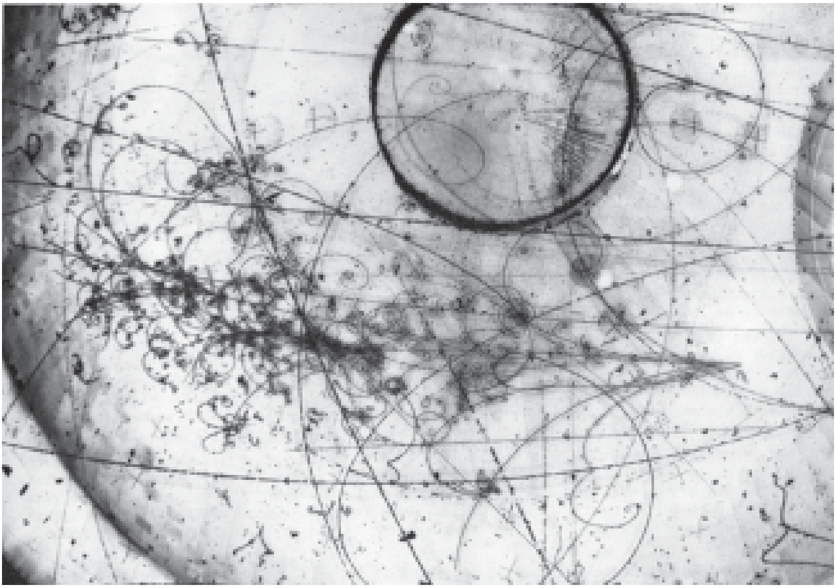
हल्का-फुल्का, नज़रें चुराता न्यूट्रिनो

भास बापट



फर्मी नैशनल लैबोरेटरी।

हम अक्सर यह पढ़ते हैं कि परमाणु पदार्थ की सबसे छोटी इकाई है। इस कथन के साथ थोड़ी और बारीक जानकारी भी मिल जाती है कि परमाणु स्वयं ऋणावेशित हल्के-फुल्के इलेक्ट्रॉन और एक भारी-भरकम धनावेशित नाभिक से बना होता है। यह भी बताया जाता है कि नाभिक प्रोटॉन और न्यूट्रॉन से बनता है। इनमें से न्यूट्रॉन पर कोई आवेश नहीं होता जबकि इलेक्ट्रॉन और प्रोटॉन पर बराबर-बराबर ऋण व धन आवेश होते हैं। न्यूट्रॉन और प्रोटॉन का द्रव्यमान लगभग बराबर होता है (प्रोटॉन थोड़ा हल्का होता है) और इलेक्ट्रॉन इनकी तुलना में बहुत हल्का होता है।

लगभग दो सदी पहले उपरोक्त वक्तव्य अजीबोगरीब सुनाई पड़ता,

जब इस बात पर ही बहस चल रही थी कि क्या पदार्थ कणों से बना होता है। लगभग एक सदी पहले इन कथनों पर बहस जारी थी और ये स्वीकार किए जाने की दहलीज़ पर थे। किन्तु आज यह बात बिलकुल भी अजीब नहीं लगती है कि परमाणु के अन्दर और भी कण होते हैं। तो सवाल यह है कि क्या ये तीन कण (इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन व न्यूट्रॉन) मूलभूत कण हैं या क्या इन कणों की और भी बारीक संरचना है। पिछले करीब अस्सी सालों से वैज्ञानिक इसी बात से जूझ रहे हैं कि क्या इन कणों की भी कोई उप-संरचना है।

नाभिक के अन्दर ताक-झाँक

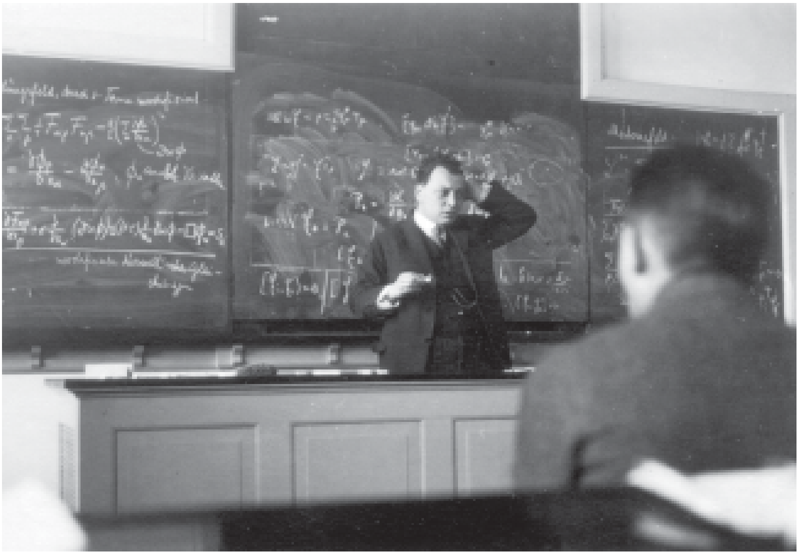
परमाणु में, या यों कहें कि नाभिक के अन्दर कुछ और भी है, इसका पहला संकेत तब मिला था जब बीटा क्षय नामक विकिरणधर्मी प्रक्रिया का विश्लेषण किया गया। बीटा क्षय के दौरान द्रव्यमान A और आवेश Z वाला नाभिक एक ऐसे नाभिक में बदल जाता है जिसका द्रव्यमान तो लगभग वही रहता है किन्तु आवेश Z+1 हो जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान एक इलेक्ट्रॉन का उत्सर्जन होता है।

$${}^{A}_{Z}X \rightarrow {}^{A}_{Z+1}Y + e^{-}$$

इतिहास पर नज़र डालें तो बीटा कण नाम रेडियोसक्रिय पदार्थों से निकलने वाले ऋणावेशित विकिरण को दिया गया था। आगे चलकर स्पष्ट हुआ कि यह इलेक्ट्रॉन की एक धारा होती है। बीटा क्षय को इस तरह समझा जा सकता है कि पदार्थ X के नाभिक का एक न्यूट्रॉन, एक प्रोटॉन और एक इलेक्ट्रॉन में टूट जाता है। यह इलेक्ट्रॉन तो उत्सर्जित हो जाता है। इसकी वजह से नाभिक के द्रव्यमान में तो कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं होता किन्तु आवेश में +1 की वृद्धि हो जाती है, क्योंकि उदासीन न्यूट्रॉन का स्थान एक धनावेशित प्रोटॉन ले लेता है। अर्थात् इस प्रक्रिया में आवेश का संरक्षण होता है।

किन्तु इस समीकरण में द्रव्यमान और ऊर्जा के संरक्षण को लेकर दिक्कत थी। यह तो 1930 के दशक में पता ही था कि द्रव्यमान, संवेग और ऊर्जा परस्पर सम्बन्धित हैं। यह सम्बन्ध आइंस्टाइन के विशिष्ट सापेक्षता सिद्धान्त से परिभाषित होता है। यह भी स्पष्ट था कि किसी भी अभिक्रिया के दौरान द्रव्यमान-ऊर्जा का कुल मिलाकर संरक्षण होना चाहिए। उपरोक्त अभिक्रिया के मामले में ऊर्जा व संवेग के संरक्षण का आशय यह होगा कि उत्सर्जित इलेक्ट्रॉन (यानी बीटा कण) की ऊर्जा का निश्चित मान होना चाहिए। किन्तु स्थिति यह थी कि इलेक्ट्रॉन की ऊर्जा एक अधिकतम मान तक लगातार बदलती रहती है। अर्थात् लगता था कि ऊर्जा व संवेग के संरक्षण के नियम का उल्लंघन हो रहा है।

इसके चलते नील्स बोर ने अटकल लगाई कि सम्भवतः नाभिकीय क्रियाओं



CERN लाइब्रेरी।

चित्र-1: वोल्फगैंग पॉली, 1928, ज़्यूरिक।

(जैसे बीटा क्षय) के दौरान ऊर्जा व संवेग का संरक्षण नहीं होता। किन्तु इस बात को पचाना आसान नहीं था क्योंकि संरक्षण का उक्त सिद्धान्त हर मामले में सही पाया गया था और इसे भौतिक शास्त्र का बुनियादी सिद्धान्त माना जाता था। इस बात पर विचार करके वोल्फगैंग पौली ने 1930 में एक निहायत असाधारण सुझाव दिया। पौली का सुझाव था कि इस क्रिया में एक नया उदासीन कण उत्सर्जित होता है जिसका कोणीय संवेग (या घूर्णन) h/2 होता है। उन्होंने इस नए कण को 'न्यूट्रॉन' नाम दिया था। आगे चलकर यह न्यूट्रिनो कहलाया। विखण्डन की इस पूरी क्रिया में एक और कण होने पर ऊर्जा, संवेग और कोणीय संवेग -- सबका संरक्षण हो जाता है। अर्थात् संरक्षण के सिद्धान्त को अक्षुण्ण रखने के लिए न्यूट्रिनो का 'आविष्कार' किया गया था।

1932 में जेम्स चेडविक ने एक उदासीन कण की खोज ज़रूर की किन्तु यह पौली द्वारा प्रस्तावित 'न्यूट्रॉन' से कहीं अधिक भारी था। बहरहाल, 1956 तक पौली द्वारा प्रस्तावित कण चाहे खोजा न जा सका था किन्तु इसने एनरिको फर्मी द्वारा 1933 में विकसित बीटा क्षय के सिद्धान्त में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। फर्मी ने पौली के उक्त अनावेशित कण को न्यूट्रिनो नाम दिया था।

बलों और कणों की कहानी

उन्नीसवीं सदी की समाप्ति तक दूरस्थ वस्तुओं के बीच दो तरह के बल (या अन्तर्क्रियाएँ) ज्ञात थेः गुरुत्व बल जो द्रव्यमान-युक्त किन्हीं भी दो वस्तुओं के बीच आकर्षण के लिए जवाबदेह था और विद्युत-चुम्बकीय अन्तर्क्रिया जो आवेशित वस्तुओं के बीच विकर्षण अथवा आकर्षण के लिए ज़िम्मेदार थी। नया कण न्यूट्रिनो एक पहेली थी। लगता था कि इसमें न तो द्रव्यमान है और न आवेश है। इसलिए फर्मी के सिद्धान्त का एक अर्थ तो यह था कि एक और किस्म का बल होना चाहिए, जो विद्युत-चुम्बकीय बल से कमज़ोर है और नाभिकीय दूरियों पर काम करता है और एक अकेले न्यूट्रॉन को साबुत रखने का काम करता है क्योंकि न्यूट्रॉन वैसे तो बेतरतीबी से अपने तीन घटकों में टूटता रहता हैः प्रोटॉन, इलेक्ट्रॉन और न्यूट्रिनो।

$$n \rightarrow p^+ + e^- + \bar{\nu}_e$$

इस नई प्रस्तावित अन्तर्क्रिया को दुर्बल अन्तर्क्रिया नाम दिया गया क्योंकि माना जाता था कि यह विद्युत-चुम्बकीय अन्तर्क्रिया की अपेक्षा कम शक्तिशाली है। समय के साथ इस मान्यता को अवलोकनों ने सही ठहराया है। 1960 के दशक में हुए अध्ययनों ने नाभिकीय संरचना की जो तस्वीर प्रस्तुत की, वह तेज़ी-से बदलती गई और विभिन्न मॉडल्स में आन्तरिक सुसंगति की जाँच ज़रूरी हो गई। इस सारी जद्दोजहद में से धीरे-धीरे कण भौतिकी का व्यापक रूप से स्वीकार्य एक मॉडल उभरा जिसे स्टैण्डर्ड मॉडल* कहते हैं।

सरलतम रूप में स्टैण्डर्ड मॉडल प्रत्येक नाभिकीय कण (न्यूक्लिऑन यानी प्रोटॉन और न्यूट्रॉन) को एक उप-संरचना प्रदान करता है। न्यूक्लिऑन्स कुछ मूलभूत कणों से मिलकर बने होते हैं, जिन्हें क्वार्क्स कहते हैं। दूसरी ओर, इलेक्ट्रॉन व न्यूट्रिनो एक अन्य किस्म के मूलभूत कण हैं जिन्हें लेप्टॉन्स कहते हैं। क्वार्क्स आपस में अन्तर्क्रिया एक और बल के माध्यम से करते हैं जिसे शक्तिशाली अन्तर्क्रिया (स्ट्राँग इंटरेक्शन) कहते हैं। इस नाम का अर्थ है कि यह अन्तर्क्रिया विद्युत-चुम्बकीय अन्तर्क्रिया से ज़्यादा शक्तिशाली होती है।

क्वार्क्स पर जो आवेश होते हैं वे विद्युत-चुम्बकीय आवेशों के अंश होते हैंः $+2e/3$, $-e/3$ और इनके द्रव्यमान न्यूक्लिऑन्स के द्रव्यमान से कम होते हैं। गौरतलब बात यह है कि क्वार्क्स में द्रव्यमान और आवेश होता है, इसलिए ये आपस में गुरुत्वीय तथा विद्युत-चुम्बकीय अन्तर्क्रिया भी करते हैं। दूसरी ओर लेप्टॉन्स आवेशित भी हो सकते हैं और उदासीन भी; इनमें द्रव्यमान हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है। तो ये आपस में दुर्बल अन्तर्क्रिया के ज़रिए क्रिया करते

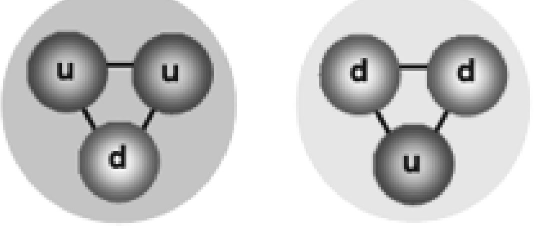
** स्टैण्डर्ड मॉडल से सम्बन्धित अजय शर्मा का लेख पढ़ें 'संदर्भ' अंक-66 में।*

हैं और विद्युत-चुम्बकीय व गुरुत्वीय अन्तर्क्रिया कर भी सकते हैं और नहीं भी कर सकते हैं (स्टैण्डर्ड मॉडल में हर अन्तर्क्रिया के लिए एक मध्यस्थ या सन्देशवाहक कण भी होता है। विद्युत-चुम्बकीय अन्तर्क्रिया के मध्यस्थ द्रव्यमान-रहित फोटॉन होते हैं, शक्तिशाली अन्तर्क्रिया द्रव्यमान-रहित ग्लूऑन्स के माध्यम से सम्पन्न होती है जबकि गुरुत्वीय अन्तर्क्रिया के बारे में माना जाता है कि वह ग्रेविटॉन के ज़रिए पूरी होती है। सारे मध्यस्थ कणों का घूर्णन 1 होता है।)। कणों के अलावा इस मॉडल में प्रति-कण (एंटी पार्टिकल्स) भी होते हैं मगर हम यहाँ उनकी बारीकियों में नहीं जाएँगे।

प्रोटॉन और न्यूट्रॉन सम्मिश्र कण हैं। प्रोटॉन तीन मूलभूत कणों से मिलकर बना होता है: दो अप-क्वार्क (u) और एक डाउन क्वार्क (d) जबकि न्यूट्रॉन एक अप-क्वार्क (u) और दो डाउन-क्वार्क (d) से मिलकर बनता है (चित्र-2)। न्यूट्रॉन के क्षय से न्यूट्रिनो बनने की जिस बात से पूरी बहस शुरू हुई थी, उसे स्टैण्डर्ड मॉडल में निम्न समीकरण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है:

$$udd \longrightarrow uud + e^- + \bar{\nu}_e$$

एक किस्म का क्वार्क दूसरे किस्म के क्वार्क में बदल सकता है (अर्थात् u से d और d से u)। क्वार्क की किस्मों को भौतिक शास्त्री स्वाद कहते हैं (जिसका स्वाद के साधारण अर्थ से कोई लेना-देना नहीं है)। स्वाद परिवर्तन की यह प्रक्रिया ही बीटा क्षय के मूल में है। इस प्रक्रिया में एक न्यूट्रॉन एक प्रोटॉन, एक इलेक्ट्रॉन और एक एंटी-इलेक्ट्रॉन न्यूट्रिनो में 'टूट' जाता है। यह तब होता है जब न्यूट्रॉन (udd) का एक डाउन क्वार्क अप-क्वार्क में तबदील हो जाता है, जिसकी वजह से न्यूट्रॉन बदलकर प्रोटॉन (uud) बन जाता है और इस प्रक्रिया में एक W-बोसॉन उत्सर्जित होता है। इस W-बोसॉन का क्षय फिर एक इलेक्ट्रॉन और एक एंटी-इलेक्ट्रॉन न्यूट्रिनो में हो जाता है।



चित्र-2: प्रोटॉन और न्यूट्रॉन के क्वार्क।

अर्थात् स्टैण्डर्ड मॉडल में न्यूट्रिनो का उत्सर्जन इस वजह से होता है कि एक स्वाद का क्वार्क दूसरे स्वाद के क्वार्क में बदल जाता है जिसके फलस्वरूप एक जोड़ी लेप्टॉन्स (एक इलेक्ट्रॉन और एक न्यूट्रिनो) बनते हैं। न्यूट्रिनो का एक अत्यन्त रहस्यमयी गुण उसका द्रव्यमान है। इस बात पर निरन्तर बहस जारी है कि न्यूट्रिनो में द्रव्यमान होता है या नहीं और न्यूट्रिनो का द्रव्यमान निर्धारित करने के लिए कई प्रयोग किए जाते रहे हैं।

अन्य कणों से अन्तर्क्रिया

न्यूट्रिनो का द्रव्यमान पता करने में सबसे बड़ी चुनौती यह है कि न्यूट्रिनो को पकड़ना बहुत मुश्किल है। दुर्बल अन्तर्क्रियाओं के प्रभाव की दूरी बहुत कम होती है। यह बल न्यूक्लिऑन की लम्बाई के बराबर दूरियों पर ही प्रभावी होता है। इसलिए न्यूट्रिनो इलेक्ट्रॉन और प्रोटॉन के साथ बमुश्किल अन्तर्क्रिया करते हैं जबकि यही दो कण लगभग समस्त पदार्थ में व्याप्त होते हैं। इसलिए पदार्थ में से न्यूट्रिनो के गुज़रने को ताड़ना निहायत मुश्किल है। फर्मी द्वारा न्यूट्रिनो का विचार दिए जाने के 20 साल बाद ही इन्हें पहली बार 'देखा' गया। 1956 में क्लाइड कोवन और फ्रेडरिक राइन्स ने एक परमाणु रिएक्टर में से निकलने वाले एंटी-न्यूट्रिनो को पकड़ा था। उन्होंने इसे 'देखने' के लिए प्रोटॉन के साथ उसकी अन्तर्क्रिया का अवलोकन किया था।

$$\bar{\nu}_e + p^+ \rightarrow n + e^+$$

पॉज़िट्रॉन (e^+, जो इलेक्ट्रॉन का एंटी-पार्टिकल है) आसानी-से आसपास के पदार्थ में उपस्थित कई सारे इलेक्ट्रॉन के साथ अन्तर्क्रिया करता है और ये एक-दूसरे को खत्म कर देते हैं और इस क्रिया में दो गामा किरणें निकलती हैं। न्यूट्रॉन जब आसपास के पदार्थ में उपस्थित किसी उपयुक्त नाभिक में कैद हो जाता है तो उसका अवलोकन किया जा सकता है। ऐसा होने पर एक और गामा किरण निकलती है।

इन दो क्रियाओं का साथ-साथ होना तथा साथ में निश्चित ऊर्जा की तीन गामा किरणों का उत्सर्जन एंटी-न्यूट्रिनो की उपस्थिति के स्पष्ट पदचिन्ह हैं। उपरोक्त अभिक्रिया में शामिल न्यूट्रिनो तीन किस्मों में से एक किस्म का न्यूट्रिनो है जिसे इलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो कहते हैं।

1962 में लेडरमैन, श्वार्ट्ज़ और स्टाइनबर्गर ने एक और किस्म के न्यूट्रिनो (म्युऑन-न्यूट्रिनो) की खोज की जिसके लिए उन्हें 1988 में भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से नवाज़ा गया। 1975 में जब स्टैनफोर्ड लीनियर एक्सलरेटर सेंटर में तीसरे किस्म के लैप्टॉन (टाउ) की खोज हुई तो यह भी उम्मीद की गई थी कि इसका एंटी-पार्टिकल (टाउ-न्यूट्रिनो) भी ज़रूर होगा। टाउ-न्यूट्रिनो की उपस्थिति की पुष्टि टाउ क्षय में गुमशुदा ऊर्जा और संवेग के आधार पर हुई जो लगभग वैसा ही था जिसके आधार पर इलेक्ट्रॉन-

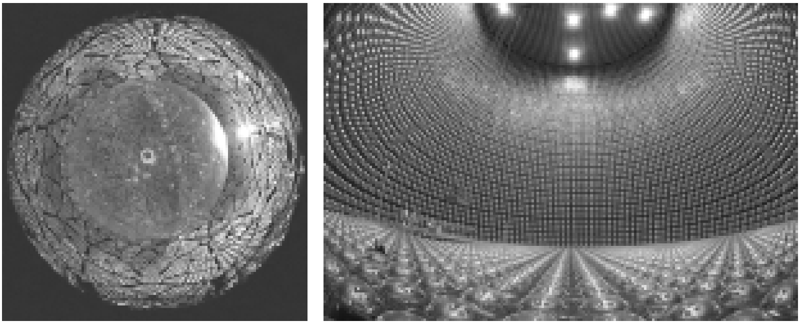
न्यूट्रिनो की खोज की गई थी। टाउ-न्यूट्रिनो की खोज की घोषणा सबसे पहले 2000 में फर्मीलैब के डोनट संयुक्त कार्यक्रम के द्वारा की गई। इसकी उपस्थिति को सैद्धान्तिक सुसंगति और लार्ज इलेक्ट्रॉन-पॉज़िट्रॉन कोलाइडर से प्राप्त प्रायोगिक आँकड़ों के आधार पर पहले ही माना जा चुका था।

वर्तमान न्यूट्रिनो भौतिकी

न्यूट्रिनो की उपस्थिति के पहले प्रस्ताव के बाद कई प्रयोगों से इसकी उपस्थिति की पुष्टि हो चुकी है। समय के साथ तीन अलग-अलग किस्म के न्यूट्रिनो खोजे जा चुके हैं। न्यूट्रिनो को भलीभाँति स्टैण्डर्ड मॉडल में समाविष्ट किया जा चुका है। अलबत्ता, एक छोटी-सी अड़चन बाकी है - न्यूट्रिनो का द्रव्यमान। स्टैण्डर्ड मॉडल में न्यूट्रिनो को द्रव्यमान-विहीन माना गया है। नए प्रायोगिक आँकड़े दर्शा रहे हैं कि न्यूट्रिनो में द्रव्यमान होता है और इसके चलते सिद्धान्तविद कण-भौतिकी के स्टैण्डर्ड मॉडल में संशोधन करने को विवश हो गए हैं। रेडियोसक्रिय क्षय के अलावा न्यूट्रिनो का एक बड़ा स्रोत सूर्य तथा दूरस्थ निहारिकाओं व सुपरनोवा से आने वाला विकिरण है।

सूर्य के केन्द्रीय भाग से आने वाले इलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो की मात्रा को नापने का काम यूएसए में होमस्टेक खदान के अन्दर डेविस और बैकाल ने 1960 के दशक में किया था। उन्होंने पाया था कि यह संख्या स्टैण्डर्ड मॉडल द्वारा अनुमानित मात्रा की एक-तिहाई और आधी के बीच है। यह अन्तर, जिसे सौर न्यूट्रिनो समस्या कहते हैं, लगभग तीस सालों तक अनसुलझी ही रही। प्रति सेकण्ड खरबों न्यूट्रिनो हमारे शरीर में से गुज़रते हैं। ये हमारे अपने सूर्य और अन्य दूरस्थ तारों के केन्द्रीय भाग में चल रही संलयन क्रिया के फलस्वरूप बनते हैं। जब विशाल तारों की मृत्यु होती है, उस समय उनकी अधिकांश ऊर्जा उग्र सुपरनोवा विस्फोटों में न्यूट्रिनो के रूप में निकलती है। हालाँकि, दूरबीन से देखने पर सुपरनोवा बहुत चमकीले दिखते हैं मगर प्रकाश के रूप में वे जितनी ऊर्जा छोड़ते हैं वह कुल ऊर्जा का अंश मात्र ही होती है। 1987 में जब हमसे 1,50,000 प्रकाश वर्ष की दूरी पर एक तारा ढह गया था, तब भौतिक शास्त्रियों ने किसी सुपरनोवा से आने वाले न्यूट्रिनो कणों का पहली बार अवलोकन किया था। दो विशाल भूमिगत प्रयोगों में सुपरनोवा से आने वाले कणों को पकड़ा गया था।

सडबरी न्यूट्रिनो वेधशाला में तीनों प्रकार के न्यूट्रिनो को भाँपने की क्षमता है। यहाँ सन् 2000 में एक प्रयोग से यह स्थापित हुआ था कि न्यूट्रिनो अपना प्रकार बदलते हैं। तकनीकी भाषा में कहें तो वे अपने अलग-अलग स्वाद (टाउ-म्यूऑन और इलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो) के बीच डोलते रहते हैं। इस तरह के कम्पन का मतलब होता है



रॉय केल्शिमड्, बरकली लैब।

http://i.imgur.com/0grGu.jpg

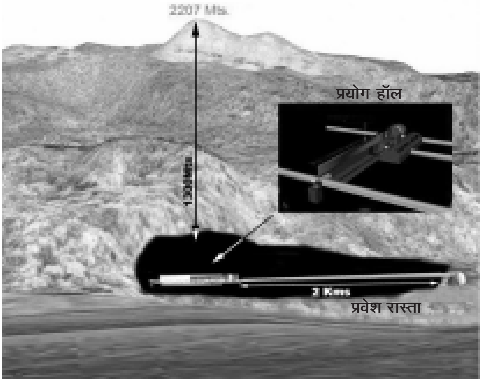
चित्र-3: सडबरी न्यूट्रीनो ऑब्ज़र्वेटरी, कनाडा और सुपर-कामिओकांडे ऑब्ज़र्वेटरी, जापान के डिटेक्टर जिनमें न्युट्रीनो पर महत्वपूर्ण शोध हुआ है।

कि उनका द्रव्यमान शून्य नहीं है। न्यूट्रिनो का द्रव्यमान शून्य नहीं है, इसका एक और प्रमाण जापान में 1988 में किए गए सुपर कामिओका एनडीई (न्यूट्रिनो डिटेक्टर एक्सपेरिमेंट) प्रयोग से भी मिला था। किन्तु इस प्रयोग के परिणाम विशिष्ट रूप से सौर न्यूट्रिनो से सम्बन्धित नहीं थे। हाल के वर्षों में न्यूट्रिनो को भाँपने के लिए कई प्रयोग किए गए हैं। इनमें अंटार्कटिका में किया गया अमांडा प्रयोग भी शामिल है। और अब इससे भी बड़े प्रयोग (आइसक्यूब) की योजना बन रही है। इसकी मदद से सुदूर ब्रह्माण्ड में होने वाले गामा किरण विस्फोटों में न्यूट्रिनो की तलाश की जा सकेगी। वर्तमान अनुमान यह है कि न्यूट्रिनो का द्रव्यमान इलेक्ट्रॉन के द्रव्यमान का दस लाखवाँ भाग है।

न्यूट्रिनो को पकड़ने के लिए एक और प्रयोग जर्मनी में किया जा रहा है जिसका नाम है कैट्रिन (कार्ल्सरूहे ट्रिशियम न्यूट्रिनो प्रयोग)। इस प्रयोग में ट्रिशियम के बीटा क्षय का अवलोकन किया जाता है और उत्सर्जित इलेक्ट्रॉन की ऊर्जा को सटीकता से नापा जाता है। इसके आधार पर न्यूट्रिनो का द्रव्यमान तय करने में मदद मिलेगी। एक मायने में यह प्रयोग हमें वापिस उस प्रयोग तक ले जाता है जहाँ से सारा झमेला शुरू हुआ था। यदि यह प्रयोग हमें न्यूट्रिनो के द्रव्यमान की सीमाएँ बाँधने में मदद करता है, तो हम स्टैण्डर्ड मॉडल पर पुनर्विचार करने को मजबूर हो जाएँगे।

यह काफी समय से ज्ञात है कि गोचर पदार्थ (जो हमें दिखता है) ब्रह्माण्ड के कुल द्रव्यमान का एक अंश मात्र है। शेष सारा द्रव्यमान ऐसे पदार्थ के रूप में है जो प्रकाश विकिरित नहीं करता। इसे अदृश्य पदार्थ (डार्क मैटर) कहते हैं। सुपर कामिओका एनडीई प्रयोग में जिस न्यूट्रिनो की खोज की गई थी, वे अदृश्य पदार्थ का बड़ा

http://lifeglint.com



चित्र-4: तमिल नाडु के बोदी वैस्ट हिल्स में पहाड़ के चरम से 1300 मी. की गहराई पर इंडिया न्यूट्रीनो ऑब्ज़र्वेटरी का प्रस्तावित नक्शा। सन् 2020 तक इसके पूरे होने की सम्भावना है।

हिस्सा तभी हो सकते हैं जब उनका द्रव्यमान मात्र स्वाद-परिवर्तन से अधिक हो।

जब बिग बैंग (महाविस्फोट) के साथ ब्रह्माण्ड की शुरुआत हुई थी, उस समय पदार्थ और प्रति-पदार्थ लगभग बराबर मात्रा में थे। जब ब्रह्माण्ड ठण्डा हुआ तो अधिकांश पदार्थ को प्रति-पदार्थ ने नष्ट कर दिया। जो बचा है वह 10 अरब भागों में से एक भाग के बराबर है। सवाल यह है कि ऐसा क्यों है कि प्रति-पदार्थ के मुकाबले पदार्थ थोड़ा अतिरिक्त मात्रा में है, ताकि हमारा अस्तित्व सम्भव हो सके?

यदि स्टैण्डर्ड मॉडल को इस तरह विस्तार देना हो कि उसमें द्रव्यमान-शुदा न्यूट्रिनो को स्वाभाविक ढंग से समाविष्ट किया जा सके, तो काफी दूरगामी परिवर्तनों की ज़रूरत होगी। उदाहरण के लिए कई सैद्धान्तिक भौतिक शास्त्री कह रहे हैं कि न्यूट्रिनो के द्रव्यमान की व्याख्या के लिए हमें जगह को परिभाषित करने के लिए कई और आयामों की ज़रूरत पड़ेगी। अन्य सिद्धान्तविदों की दलील है कि हमें पदार्थ और प्रति-पदार्थ के बीच के स्पष्ट भेद को तिलांजलि देनी होगी। न्यूट्रिनो का द्रव्यमान शायद हमारे अस्तित्व की भी व्याख्या कर दे।

भास बापट: कई साल तक फिज़िकल रिसर्च लेबोरेटरी, अहमदाबाद में शोधकार्य किया है। वर्तमान में भारतीय विज्ञान शिक्षा एवं अनुसन्धान संस्थान, पुणे में एसोसिएट प्रोफेसर हैं। परमाणु और आणविक भौतिक विज्ञान में प्रायोगिक शोध करते हैं। शिक्षण और शिक्षा में रुचि रखते हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: सुशील जोशी: एकलव्य द्वारा संचालित *स्रोत फीचर सेवा* से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

यह लेख *स्रोत* पत्रिका, नवम्बर 2017 से साभार।